इकाई 10 सत्रहवीं शताब्दी में मराठा राज्य का उदय

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपको निम्नलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त होगी :

- मराठों के उदय के लिए उत्तरदायी कारकों,
- मराठा शक्ति के उदय के कारण,
- मुगल-मराठा संघर्ष,
- यूरोपीय शक्तियों के साथ मराठों के संबंध,
- शिवाजी की प्रशासनिक संरचना तथा किस हद तक यह दक्खन के प्रशासन तंत्र से प्रभावित थी, और
- पेशवाओं के अधीन मराठा शक्ति का पतन।

10.1 प्रस्तावना

मराठा शक्ति के उदय के साथ दक्खनी राजनीति को एक नया आयाम मिला। इसके कारण न केवल दक्खनी राज्यों का समीकरण बदल गया बल्कि इससे मुगल-दक्खनी संबंध भी प्रभावित हुए। इस इकाई में हम उन कारकों की चर्चा करेंगे जिन्होंने अंततः मराठा शक्ति के उदय में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। आप पढ़ेंगे कि किस प्रकार मराठा एक छोटे "**भूमिया**" की हैसियत से उठकर बादशाहत की ऊंचाई तक पहुंच गये। इस इकाई में मुगल-मराठा संघर्ष की विस्तार से चर्चा की गयी है। यहां इस बात की चर्चा की गयी है कि किस प्रकार 17वीं शताब्दी के अंत तक मराठा मुगलों को चुनौती देते रहे और मुगल कभी भी पूर्ण रूप से उनकी शक्ति का दमन नहीं कर सके। यहां मराठा प्रशासन की विशेषताओं की भी चर्चा की गयी है। इस इकाई में अरब सागर में नयी उभरती यूरोपीय शक्तियों के साथ मराठों के संबंध की भी चर्चा की गयी है।

10.2 स्रोत और भूगोल

मराठा शक्ति के उदय पर बातचीत करने से पहले, आइए आपको मराठा इतिहास के स्रोत और मराठों द्वारा शासित प्रदेश के भूगोल से परिचित करा दें।

स्रोत

इस संदर्भ में सबसे महत्वपूर्ण मराठी ग्रंथ 1694 ई० में सभासद द्वारा लिखित शिवाजी की जीवनी (**बखर**) है। चित्रगुप्त ने इसे और विस्तृत किया। रामचंद्र पंत आमात्य द्वारा लिखित शम्भाजी का **अदनापात्र** या **मराठशाहितिल राजनीति** (1716) अन्य ऐसे प्रमुख मराठी ग्रंथ हैं जिनमें शिवाजी से लेकर शम्भाजी तक की घटनाओं का जिक्र किया गया है। जयराम पिण्डे के **राधामाधव विलास चम्पू** (संस्कृत) भी एक अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथ है जिसमें मुख्य रूप से शिवाजी के जीवन का वर्णन किया गया है। भीमसेन की **नुस्खा-ए दिलकुशा** (फारसी) में भी मुगल-मराठा संबंधों की जानकारी दी गयी है।

भूगोल

महाराष्ट्र प्रदेश में सहयाद्री पहाड़ी शृंखला (जिसे पश्चिमी घाट के नाम से भी जाना जाता है) और पश्चिमी समुद्र तट के बीच स्थित कोंकण प्रदेश शामिल है, सहयाद्री शृंखला के शीर्ष पर घटमाथा है, और निचली घाटी का **देस** क्षेत्र शामिल है। इसके उत्तर में पश्चिम की ओर सहयाद्री पर्वत शृंखला है जबकि पूर्व से पश्चिम तक सतपुड़ा और विंध्य पहाड़ी शृंखलाएं हैं। इसके पहाड़ी-किले प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान करते थे। सामरिक रूप से यह भारत का सर्वश्रेष्ठ किलाबंद क्षेत्र है। इसकी पर्वत शृंखला और अभेद्य दुर्ग व्यावहारिक रूप से आक्रमणकारियों के लिए अभेद्य थे। इस इलाके की भूमि कृषि की दृष्टि से कम उपजाऊ है। परंतु इसकी प्राकृतिक संरचना ने यहां के लोगों को मेहनती और कठोर बना दिया। दक्खनी पठार की जमीन काली और उपजाऊ है। हालांकि यहां वर्षा कम होती है, परंतु इस क्षेत्र में फसल अच्छी होती है।

10.3 मराठा शक्ति का उदय : सैद्धांतिक ढाँचा

मराठा शक्ति के उदय के संदर्भ में विद्वानों ने विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोण और राय प्रस्तुत की है। ग्रांट डफ इसे सहयाद्री के जंगलों में विद्रोही गतिविधियों के परिणाम के रूप में देखते हैं। परन्तु एम. जी. रानाडे का मानना है कि यह एक आकस्मिक घटनाक्रम से कहीं कुछ ज्यादा था। वे इसे विदेशी शासन के खिलाफ "राष्ट्रीय संघर्ष" के रूप में देखते हैं। यह विचार इस आधार पर विवादग्रस्त हो जाता है कि अगर मुगल विदेशी थे तो उतने ही विदेशी बीजापुर और अहमदनगर के शासक भी थे। अगर मराठा एक शक्ति का आधिपत्य स्वीकार कर सकते थे तो मुगलों का क्यों नहीं ?

जदुनाथ सरकार और जी. एस. सरदेसाई मराठा शक्ति के उदय को औरंगजेब की "साम्प्रदायिक" नीतियों के खिलाफ "हिंदू" प्रतिक्रिया के रूप में देखते हैं। किंतु सतीश चन्द्र का मानना है कि शिवाजी ने अकबर की "सुलह कुल" की नीति की प्रशंसा की। उनके अनुसार हिंदू प्रतिक्रिया के तर्क का आधार भी बहुत ठोस नहीं है। यहां तक कि उनके आरंभिक संरक्षक मुसलमान ही थे, जैसे कि बीजापुर और अहमदनगर के शासक। इसके अतिरिक्त महाराष्ट्र के बाहर शिवाजी ने कभी भी हिंदुओं के हित या कल्याण के लिए लड़ाई नहीं लड़ी। यहां तक कि महाराष्ट्र के भीतर भी वे सामाजिक सुधारों की ओर ध्यान न दे सके। दूसरी ओर महाराष्ट्र के बाहर वे हिंदू किसानों से कठोरता से पेश आये और उन्हें निर्ममता से लूटा। यह भी तर्क दिया जाता है कि अपने राज्यारोहण के समय उन्होंने **हिन्दू धर्मोद्धारक** की पदवी धारण की थी वह इस काल के लिए कोई नयी चीज नहीं थी।

आन्द्रे विंक का मानना है कि दक्खन के सुल्तानों पर पड़ते मुगल दबाव के परिणामस्वरूप मराठों का उदय हुआ। यहां तक कि ग्रांट डफ भी उनके उदय में मुगल तत्व को स्वीकार करते हैं। परन्तु उनके उदय में यही तत्व शामिल नहीं था अन्य तत्व भी इसमें क्रियाशील थे।

सतीश चन्द्र मराठों के उदय में सामाजिक-आर्थिक तत्वों की भूमिका पर बल देते हैं। शिवाजी की सफलता का राज अपने इलाके के किसानों को संगठित करना था। आम मान्यता यह है कि उसने **जागीरदारी** और **जमींदारी** प्रथा समाप्त कर किसानों के साथ सीधा सम्पर्क स्थापित कर उन्हें शोषण से मुक्त किया था। परंतु सतीश चन्द्र का मानना है कि वह इस प्रथा को पूरी तरह समाप्त नहीं कर सका। उसने बड़े **देशमुखों** की ताकत कम कर दी, गलत प्रथाओं को सुधारा और आवश्यक निरीक्षण की व्यवस्था की। इस प्रकार उसने पुरानी व्यवस्था में ही सुधार किया और उसे अच्छा बनाया। (विवरण के लिए खंड 5, इकाई 19 पढ़िए)। इसके अलावा उसने **देशमुखों** की सैनिक संख्या कम करके उनकी सैनिक जिम्मेदारी भी कम कर दी। यही मुख्य कारण था कि शिवाजी की सैन्य शक्ति बड़े **देशमुखों** की "सामंती सेनाओं" पर आधारित नहीं थी। बड़े **देशमुखों** पर निर्भर छोटे भूमिपतियों को शिवाजी की इस नीति से लाभ हुआ। वस्तुतः ये छोटे भूमिपति ही उसकी शक्ति थे। उदाहरण के लिए, शिवाजी का सबसे पहले पक्ष लेने वाले मावले के **देशमुख** मूलतः छोटे भूमिपति ही थे। जावली के मोरे, उतरौली के खोपड़े और फल्टन के निम्बालकर भी छोटे भूमिपति

ही थे। इसके अलावा शिवाजी ने कृषि के विस्तार और विकास पर बल दिया। इससे किसानों के साथ-साथ खास तौर पर इन छोटे भूमिपतियों को भी फायदा हुआ।

जमीन पर हक हासिल करने के लिए बड़े, मंझोले और छोटे **देशमुखों**, **मिरासियों** (खेतिहर मालिक) और **उपरासियों** (बाहरी किसान) के बीच संघर्ष हुआ करता था। अपने **वतन** को बढ़ाना उनका एक जुनून था। उस समय जमीन पर नियंत्रण के आधार पर ही राजनैतिक सत्ता निर्धारित होती थी।

इरफान हबीब मराठा शक्ति के उदय और शोषित किसानों की विद्रोह चेतना के बीच एक प्रकार का संबंध देखते हैं।

मराठा आंदोलन के उदय में सामाजिक तत्व भी निहित हैं। शिवाजी ने शिर्के, मोरे, निम्बालकर जैसे प्रमुख **देशमुख** परिवारों से वैवाहिक संबंध स्थापित कर अपने परिवार का सामाजिक दृष्टिकोण से स्तर ऊपर उठाने की कोशिश की। इस प्रकार उसने दोहरी नीति अपनायी, एक तरफ उसने बड़े **देशमुखों** की राजनैतिक शक्ति में कटौती की और दूसरी तरफ उनके सामाजिक स्तर तक पहुंचने के लिए उनसे वैवाहिक संबंध भी स्थापित किये। राज्यारोहण (1674 ई.) द्वारा उसने न केवल अन्य मराठा जातियों से अपने परिवार को ऊँचा दर्जा दिलवाया बल्कि अपने को दक्खनी शासकों के समकक्ष पहुंचा दिया। बनारस के ब्राह्मण गागा भट्ट की सहायता से अपने को सूर्यवंशी क्षत्रिय का सर्वोच्च सामाजिक स्तर हासिल करना इस दिशा में एक सोचा-समझा हुआ प्रयास था। शिवाजी ने अपने परिवार के लिए न केवल सूर्यवंशी क्षत्रिय की वंशावली तैयार करवायी जिसमें अपने परिवार को उसने इंद्र से जोड़ा। बल्कि उसने **क्षत्रिय कुलवतम्सा** (क्षत्रिय परिवारों का आभूषण) की उपाधि भी ग्रहण की। इस प्रकार मराठा परिवारों के बीच अपना सामाजिक स्तर ऊँचा करके उसने **सरदेशमुखी** वसूल करने का एकाधिकार हासिल कर लिया। अब तक शिर्के, घोरपडे आदि के संरक्षण में अन्य मराठा परिवार इस अधिकार का उपयोग किया करते थे।

इन सबसे यह स्पष्ट होता है कि उस समय मराठा समाज में सामाजिक तनाव व्याप्त था। वे मुख्य रूप से किसान और लड़ाकू जाति के लोग थे। परंतु उन्हें क्षत्रिय स्तर प्राप्त नहीं था। अतः शिवाजी के सामाजिक आंदोलन से एक महत्वपूर्ण कार्य यह हुआ कि इसके कारण मराठा और कुनबी (खेतिहर वर्ग) आपस में जुड़ गये। शिवाजी के इर्द-गिर्द इकट्ठा होने वाले कुनबी कृषक, कोली और मावल प्रदेश के अन्य कबीले सामाजिक पदानुक्रम में अपना स्तर उठाने की इच्छा रखते थे। अतः मराठों का उदय विदेशी शासन के जुए को उतार फेंकने की इच्छा का परिणाम मात्र ही नहीं था बल्कि इसकी जड़ें गहरे सामाजिक-आर्थिक कारणों में समाई हुई थीं।

उनके उदय के लिए बौद्धिक और वैचारिक ढाँचा भक्ति आंदोलन से प्राप्त हुआ जो "महाराष्ट्र धर्म" के रूप में रूपायित हुआ। इससे मराठों को एक सांस्कृतिक पहचान बनाने में भी मदद मिली। भक्ति संतों के समतावादी सिद्धांत से इन्हें बल मिला। इसके बल पर ये व्यक्तिगत या सामूहिक तौर पर वर्णानुक्रम में अपने स्तर को बढ़ाने की गतिशीलता को न्यायोचित ठहरा सकते थे। सिंधिया जैसे साधारण मूल के मराठों का सामाजिक स्तर पर आगे बढ़ना इस आंदोलन की सफलता का प्रमाण है। इस समय अनेक समूहों ने वर्णानुक्रम में अपनी स्थिति बेहतर कर ली और राजनैतिक शक्ति प्राप्त करने के अपने अधिकार को वैधता प्रदान करने की कोशिश की। एम. जी रानाडे (बाद में वी. के. राजवडे द्वारा समर्थित) के विचार में मराठों की राजनैतिक स्वतंत्रता "महाराष्ट्र धर्म" का ही परिणाम थी। इसे उन्होंने **सहिष्णु** (उदारवादी) हिंदुत्व के खिलाफ **जयष्णु** (आक्रामक) हिंदुत्व के रूप में व्याख्यायित किया है। "महाराष्ट्र धर्म" की सर्वप्रथम चर्चा 15वीं शताब्दी की रचना **गुरूचरित** में मिलती है किंतु यहां इसे एक महान् प्रबुद्ध राज्य की एक नैतिक नीति के संदर्भ में उल्लेखित किया गया है। इसे राजनैतिक मोड़ देन का श्रेय 17वीं शताब्दी के संत-कवि रामदास को जाता है जिन्होंने तुर्की अफगान-मुगल शासन के खिलाफ विचार व्यक्त किए थे। शिवाजी ने इसका लाभ उठाया। उन्होंने "महाराष्ट्र धर्म" के वैचारिक वक्तव्य का उपयोग दक्खनियों और मुगलों के खिलाफ किया। मराठों की धार्मिक निष्ठा तुलाजा भवानी, विठोबा और महादेव के प्रति थी। "हर-हर महादेव" का युद्धनाद मराठा किसानों के हृदय को छूता था। परंतु जैसा कि पी.वी. रानाडे ने सही कहा है कि "मुस्लिम प्रभुत्व के खिलाफ हिंदू शत्रुता मध्यकालीन भारतीय राजनैतिक दृश्य का न तो प्रमुख प्रेरक कारक था न ही यह कोई उल्लेखनीय तत्व था।" इस विचारधारा का खोखलापन इस तथ्य से सिद्ध होता है कि शिवाजी और अन्य मराठा सरदार **चौथ** और **सरदेशमुखी** (एक वैध लूट) अपनी सीमा के बाहर के क्षेत्रों से इकट्ठा करते थे। वस्तुतः इसने मराठा विस्तार के आरंभिक चरण में किसानों को इकट्ठा करने में "मनोवैज्ञानिक संबल" की भूमिका निभाई।

यह मानना भी कठिन प्रतीत होता है कि शिवाजी "हिंदू स्वराज्य" की स्थापना करना चाहते थे। वस्तुतः यह केन्द्रीकृत मुगल साम्राज्य के विरुद्ध एक क्षेत्रीय प्रतिक्रिया थी। मराठा अपने लिए एक बड़ा राज्य स्थापित करना चाहते थे। अहमदनगर के निजाम शाही शासन के पतन और मुगलों के आगमन ने इसके लिए आदर्श पृष्ठभूमि प्रदान की। सामान्यतया इसके सामाजिक-आर्थिक अंतर्विरोध से स्थानीय भूमिपतियों को इकट्ठा करने में मदद मिली।

बोध प्रश्न 1

1) मराठा इतिहास जानने के किन्हीं दो प्रमुख स्रोतों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

2) सही और गलत वक्तव्यों के सामने √ और × का निशान लगाइए :

   1. सहयाद्री पर्वत शृंखला और पश्चिमी घाट दो अलग भौगोलिक इकाई हैं।

   2. पहाड़ी भूमि की मिट्टी खेती के उपयुक्त थी।

   3. दक्खनी पठार की मिट्टी काली और उपजाऊ थी।

   4. दक्खन की भौगोलिक स्थिति ने वहां के निवासियों को कर्मठ और मजबूत बनाने में प्रमुख भूमिका अदा की।

3) क्या मराठा आंदोलन के उदय को "हिंदू प्रतिक्रिया" के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है?

....

....

....

....

....

10.4 मराठा शक्ति का उदय : राजनैतिक व्यवस्था

इस भाग में हम अपना अध्ययन आमतौर पर दक्खनी राज्यों के तहत मराठा सरदारों के उदय और खासतौर पर भोंसले परिवार के उदय की प्रक्रिया तक सीमित रखेंगे।

17वीं शताब्दी से ही बीजापुर, अहमदनगर और गोलकुंडा राज्यों के तहत दक्खन में मराठों का उदय हो रहा था। वे बीजापुर, अहमदनगर और गोलकुंडा राज्यों की सेना में कार्यरत थे। दक्खनी राज्यों के पहाड़ी किलों को मराठा नियंत्रित करते थे। हालांकि महत्वपूर्ण समझे जाने वाले किलों पर मुसलमान किलेदारों को तैनात किया जाता था। उन्हें अक्सर राजा, **नायक** और **राव** की उपाधि से सम्मानित किया जाता था। बीजापुर के शासक इब्राहिम आदिल शाह ने मराठों को **बारगीर** के रूप में नियुक्त किया तथा उनका उपयोग वह अक्सर अहमदनगर के निजाम शाही शासकों के खिलाफ किया करता था। यहां तक कि उसने लेखा विभाग में भी मराठा ब्राह्मणों की नियुक्ति की थी। कर्नाटक के **नायक** मराठा सरदार चन्दर राव मोरे ने बीजापुर के यूसुफ आदिल शाह के समय में विशेष स्थान प्राप्त किया। उसके पुत्र यशवन्त राव ने अहमदनगर के निजाम शाही शासकों के खिलाफ खूब नाम कमाया और उसे जावली का राजा बनाया गया। 17वीं शताब्दी के मध्य में राव नाइक निम्बालकर या फुल्टन राव भी बीजापुर शासकों के साथ जुड़ गये। मुल्लौरी के **देशमुख** जुझार राव घटगे भी बीजापुर शासक इब्राहिम आदिल शाह के तहत कार्यरत रहा। इसी प्रकार मनय भी बीजापुर के सिद्धहस्त **सिलहदार** थे। 17वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में घोरपड़े, झट्ट के डफ्ले और वारी के सावंतों ने भी बीजापुर की सेवा की। निजाम शाही शासकों के अधीन सिन्दखेर का **देशमुख** जादव राव काफी शक्तिशाली था। निजाम शाही शासकों के अधीन लोखजी जादव राव के पास 10,000 घोड़े थे।

10.4.1 शाहजी

भोंसले परिवार, जिससे शिवाजी संबंधित थे, के कुछ सदस्य अहमदनगर शासकों के अधीन **पटेल** थे। शिवाजी के दादा मालोजी का वैवाहिक संबंध फुल्टन के **देशमुख** जगपाल राव नाइक निम्बालकर के साथ था (उनकी बहन दीपा बाई की शादी मालोजी के साथ हुई थी)। सिन्दखेर के लोखजी जादव राव की पहल पर 1577 ई. में मालोजी ने **बारगीर** के रूप में मुर्तजा निजाम शाह की नौकरी कर ली। लेकिन 1599 ई. में शाह जी और जीजा बाई की शादी के प्रश्न पर उन दोनों में मनमुटाव हो गया और मालोजी को नौकरी छोड़ने पर बाध्य होना पड़ा। लेकिन जल्द ही (17वीं शताब्दी के आरंभ में) मालोजी अपनी पहुंच का उपयोग कर निम्बालकरों की सहायता से एक बार फिर निजाम शाही शासकों की सेवा में हाजिर हुए और मालोजी राजा भोंसले की उपाधि प्राप्त की। उन्हें शिवनेरी और चाकुन के किलों का जिम्मा सौंपा गया और बदले में पूना और सोपा की जागीर प्रदान की गयी। 1604 ई. में जादव राव सिंदखेर से संबंध स्थापित होने से उसकी प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई। जादव राव ने अपनी पुत्री जीजा बाई की शादी उसके पुत्र शाहजी से कर दी। इसी समय मुगलों के आक्रमणों ने अहमदनगर के स्थायित्व को पूर्णतया नष्ट कर दिया। अकबर के समय में (देखिए इकाई 9) आंतरिक कलह भी आरंभ हो गयी जिससे पूरी तरह अव्यवस्था और गड़बड़ी की स्थिति हो गई। जहांगीर ने इस स्थिति का लाभ उठाकर 1621 ई. में कई मराठा सरदारों को अपनी ओर मिला लिया। इसमें सबसे प्रमुख थे शाहजी के श्वसुर और सिंदखेर के **देशमुख** लोखजी जादव राव। मुर्तजा निजाम शाह द्वितीय (1629 ई.) के गद्दी पर बैठने

के बाद लोखजी जादव राव निजाम शाही शासक के पक्ष में चले गये, परन्तु विश्वासघाती ढंग से उनकी हत्या (1630 ई.) कर दी गयी। इसी समय जगदेव राव 5000 **ज़ात** की **मनसब** के साथ मुगल सेना में शामिल हो गया।

आरंभ में शाहजी भोंसले खान जहां लोदी के विद्रोह से पहले उसके समर्थक थे। बाद में उन्होंने आजम खां के जरिए मुगलों की सेवा में जाने का निवेदन किया और 1630 ई० में उसे 6000 **ज़ात** और 5000 **सवार** का ओहदा मिला। मालोजी के छोटे भाई वेटोजी का बेटा और शाहजी का चचेरा भाई खेलोजी भी मुगल खेमे में शामिल हो गये। परंतु 1632 ई. में शाहजी बीजापुर के पक्ष में चले गये और आदिल शाह की नौकरी कर ली। 1634 ई. तक शाहजी का निजाम शाही राज्य के एक-चौथाई हिस्से पर नियंत्रण स्थापित हो गया। परंतु 1636 ई. में मुगलों के आक्रमण से उन्हें सब कुछ खोना पड़ा और वे बीजापुर के सरदार के रूप में कोंकण की तरफ चले गये। इसी समय शाहजी को मोरार पंत (मुरारी पंडित) को प्रभावित करने का मौका मिला। उसने कर्नाटक अभियान में रन्दौला खां का साथ दिया और असीम बहादुरी का परिचय दिया। इससे खुश होकर मौहम्मद अली शाह ने उन्हें कुरार (सतारा जिला) में बतौर **जागीर** 24 गाँव दिए।

(शाहजी के जीवन-वर्णन को यहीं छोड़ कर अब हम शिवाजी के आरंभिक जीवन का वर्णन करेंगे। शाहजी के जीवन से संबंधित शेष बातें हम शिवाजी के उदय के साथ-साथ ही वर्णित करेंगे)।

10.4.2 शिवाजी : आरंभिक जीवन

शिवाजी का जन्म 10 अप्रैल, 1627 ई. को शिवनेरी में हुआ था। वह शाहजी और जीजा बाई का सबसे छोटा बेटा था। शिवाजी के बचपन के आरंभिक दिनों में उनके और शाहजो के बीच कोई संबंध कायम नहीं हो पाया था क्योंकि शाहजी बीजापुर के सरदार के रूप में कर्नाटक अभियान में व्यस्त रहे (1630-36 ई.)। 1636 ई. में शाहजी को सात किले समर्पित करने पड़े, उनमें एक शिवनेर का किला भी था। अतः शिवाजी को अपनी माँ के साथ दादाजी कोंणदेव के संरक्षण में पूना जाना पड़ा। 1640-41 ई. में शिवाजी की शादी सई बाई निम्बालकर के साथ हो गयी और दादाजी कोंणदेव के संरक्षण में शाहजी ने शिवाजी को पूना की **जागीर** सौंप दी। दादाजी कोंणदेव की मृत्यु के बाद शाहजी के प्रतिनिधि के रूप में शिवाजी पूना **जागीर** के सर्वेसर्वा बन गये। शिवाजी ने सबसे पहले पूना जिले के पश्चिम के मावल सरदारों के साथ दोस्ती की। आने वाले वर्षों में ये सरदार शिवाजी की सेना के आधार स्तम्भ सिद्ध हुए। मावल सरदारों में कारी के जेथे नायक और बन्दल नायक ने सर्वप्रथम शिवाजी के साथ गठबंधन किया।

शिवाजी अपने वैध अधिकार के रूप में शाहजी के सभी क्षेत्रों (जो इलाके 1634 ई. में शाहजी के पास थे, परंतु 1636 ई. में उन्हें समर्पित करना पड़ा था) को अपने अधीन करना चाहते थे। दादाजी कोंणदेव की मृत्यु के बाद, उन क्षेत्रों को प्राप्त करने के लिए, शिवाजी ने एक निश्चित योजना के साथ उन पर अधिकार करने का निश्चय किया। परंतु इसी समय (1648 ई.) बीजापुर के सेनापति मुस्तफा खां ने शाहजी को बंदी बना लिया, इस कारण शिवाजी को अपनी गतिविधियों को नियंत्रित करना पड़ा। शिवाजी ने अपने पिता को आदिल शाही शासक से छुड़ाने के लिए मुगलों से संधि करने की कोशिश की (1649 ई.), परंतु इसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। अंततः (16 मई, 1649) बीजापुर को बंगलौर और कोंडन देने के बाद शाहजी को मुक्त कर दिया गया।

इसी बीच (1648 ई.) शिवाजी ने धोखाधड़ी से पुरंदर का किला हथिया लिया। आने वाले वर्षों में यह किला मराठों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ। इसके बाद जावली का किला (1656 ई.) उनके कब्जे में आ गया। यह प्रमुख मावली सरदार चन्द्र राव मोरे का मजबूत गढ़ था। इसके बाद उसने रायरी (रायगढ़) पर अधिकार कर लिया जो जल्द ही मराठों की राजधानी बना। जावली पर आधिपत्य स्थापित हो जाने से न केवल दक्षिण और पश्चिम कोंकण की ओर विस्तार का मार्ग प्रशस्त हो गया बल्कि मोरे क्षेत्र के मावल सरदारों के शामिल होने से शिवाजी की सैन्य शक्ति भी मजबूत हो गयी।

(शिवाजी के उत्थान के इस लघु मूल्यांकन के बाद अब हम मुगल-मराठा संघर्ष की चर्चा करने जा रहे हैं। मुगल-मराठा संबंधों की चर्चा करने के साथ-साथ हम शिवाजी और शम्भाजी के नेतृत्व में मराठा शक्ति के विस्तार पर भी विचार-विमर्श करेंगे।)

10.5 मुगल-मराठा संबंध : एक विश्लेषण

मुगल-मराठा संबंधों को चार चरणों में विभक्त किया जा सकता है :

(i) 1615-1664 ई., (ii) 1664-1667 ई., (iii) 1667-1680 ई., और (iv) 1680-1707 ई.।

10.5.1 प्रथम चरण : 1615-1664 ई.

जहांगीर के समय से ही मुगलों ने दक्खन की राजनीति में मराठा सरदारों के महत्व को समझ लिया था। 1615 ई. में जहांगीर कुछ मराठा सरदारों को अपनी ओर मिलाने में सफल रहा था। इसके परिणामस्वरूप मुगल संयुक्त दक्खनी सेना

को हरा सके (1616 ई.)। शाहजहां ने भी 1629 ई. में ही मराठा सरदारों को अपनी ओर मिलाने की कोशिश की थी। शिवाजी के पिता शाहजी इस समय मुगलों से मिल गये परंतु बाद में उनसे अलग हो गये। उन्होंने मुरारी पंडित और बीजापुर दरबार के मुगल-विरोधी पक्ष के साथ मिलकर मुगलों के खिलाफ षड्यंत्र रचा। मराठों की ओर से आने वाली गंभीर चुनौती को देखते हुए शाहजहां ने मराठों के खिलाफ मुगल-बीजापुर संधि का विकल्प चुना। उसने बीजापुर के शासक को शाहजी की सेवा लेने से मना नहीं किया, परंतु उसे कर्नाटक में मुगल क्षेत्र से दूर रखने की मांग की (1636 ई. की संधि)। यहां तक कि औरंगजेब ने भी यही नीति अपनाई। उत्तराधिकार के युद्ध के समय उत्तर की ओर कूच करने से पहले उसने अपने **निशान** में आदिल शाह को ऐसा ही करने की सलाह दी। लेकिन शिवाजी के खिलाफ बीजापुर-मुगल संधि औरंगजेब के लिए एक दुखद स्वप्न साबित हुआ। जब 1636 ई. में शाहजहां ने ऐसी संधि की थी तो उसके पास बदले में उसे देने के लिए दो-तिहाई हिस्सा निजाम शाही क्षेत्र था, परंतु औरंगजेब के पास देने के लिए कुछ भी नहीं था। सतीश चन्द्र के अनुसार 1687 ई. में औरंगजेब द्वारा बीजापुर हासिल करने के पूर्व तक अंतर्विरोध की यही स्थिति बनी रही।

1657 ई. में औरंगजेब ने शिवाजी के साथ संधि करने की कोशिश की, परंतु उसे सफलता नहीं मिली क्योंकि बदले में शिवाजी दाभोल और आदिल शाही कोंकण चाहता था, जो एक उपजाऊ और समुद्र क्षेत्र होने के साथ-साथ विदेशी व्यापार की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण था। जल्द ही शिवाजी बीजापुर के पक्ष में चले गये और मुगल दक्खन (अहमदनगर और जुन्नार सब डिवीजन) पर धावा बोल दिया। उत्तराधिकार के युद्ध और औरंगजेब के दक्खन से चले जाने के कारण शिवाजी को रोकने वाला कोई नहीं था। जल्द ही उसने कल्याण और भिवण्डी (अक्तूबर 1657 ई.) और माहूली (जनवरी 1658 ई.) पर कब्जा जमा लिया। इस प्रकार शिवाजी ने कोलाबा जिले के समस्त पूर्वी भाग पर आधिपत्य स्थापित कर लिया जो जंजीरा के हब्शियों (सिद्दियों) के अधीन था।

औरंगजेब के उत्तर भारत की तरफ कूच कर जाने के बाद बीजापुर ने मराठों की ओर ध्यान दिया। आदिल शाही शासक ने अब्दुल्ला भटारी अफजल खां को इसका भार सौंपा परंतु शिवाजी के सामने अफजल खां की सेना टिक न सकी। इस स्थिति में कूटनीति और समझ-बूझ का ही सहारा लिया जा सकता था। समझौते के लिए दोनों के बीच मेल-मिलाप का आयोजन किया गया परंतु शिवाजी ने उसकी हत्या कर दी (10 नवंबर, 1659 ई.)। अफजल खां की हत्या के बाद मराठों के लिए बीजापुर की सेना को हराने में जरा भी समय नहीं लगा। जल्द ही पनहाला और दक्षिण कोंकण पर मराठों का आधिपत्य हो गया। परंतु मराठा पनहाला पर ज्यादा समय तक आधिपत्य नहीं रख सके और यह पुनः बीजापुर के अधिकार में चला गया (2 मार्च, 1660 ई.)।

इस स्थिति में औरंगजेब ने युवराज मुअज्जम के स्थान पर शाइस्ता खां को दक्खन का वायसराय नियुक्त किया (जुलाई, 1659 ई.)। शाइस्ता खां ने चाकन (15 अगस्त, 1660 ई.) और उत्तरी कोंकण (1661 ई.) पर अधिकार कर लिया। 1662-63 ई. तक उसने मराठों पर काफी दबाव डाला परंतु उनसे दक्षिण कोंकण (रत्नगिरि) हासिल करने में असफल रहा। 5 अप्रैल, 1663 ई. को पूना में आधी रात को मुगल खेमे पर शिवाजी ने अचानक हमला बोल दिया और मुगल वायसराय को बुरी तरह घायल कर दिया। इससे मुगल प्रतिष्ठा को गहरा आघात पहुंचा। इसके बाद मराठों ने सूरत पर आक्रमण किया और उसे खूब लूटा (सूरत की प्रथम लूट 6-10 जनवरी, 1664 ई.)।

10.5.2 द्वितीय चरण : 1664-1667 ई.

शिवाजी की बढ़ती शक्ति, अफजल खां की हत्या, पनहाला और कोंकण पर शिवाजी का कब्जा, शिवाजी को संभालने में बीजापुर की सेना की असमर्थता और अंततः शाइस्ता खां की असफलता (1600-1664 ई.) ने मुगलों को स्थिति पर पुनः विचार करने के लिए मजबूर किया। इसके बाद औरंगजेब ने मिर्जा राजा जय सिंह को दक्खन का नया वायसराय नियुक्त किया। सावधानी से आगे बढ़ने की मुगल नीति से अलग हटकर जय सिंह ने दक्खन पर पूरा नियंत्रण स्थापित करने की बृहद् योजना बनाई। इस बृहद् योजना के तहत सबसे पहले शिवाजी को कुछ रियायतें देकर और उसके साथ संधि करके बीजापुर को धमकाया जाना था और शिवाजी की **जागीर** को मुंगल दक्खन से दूर अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण इलाके में स्थानांतरित करना था। जय सिंह का विचार था कि एक बार बीजापुर के पतन के बाद शिवाजी को दबाना बहुत मुश्किल कार्य नहीं होगा।

दक्खन में मुगल वायसराय का पदभार संभालने के साथ हो उसने शिवाजी पर लगातार दबाव डालना शुरू किया। उसने पुरन्दर (1665 ई.) में शिवाजी को पराजित कर दिया। इसके बाद जय सिंह ने मुगल-मराठा संधि की बात चलाई। पुरन्दर की संधि (1665 ई.) के तहत शिवाजी ने 35 में से 23 किले समर्पित कर दिए। ये किले निजाम शाही राज्यक्षेत्र में पड़ते थे और इनकी वार्षिक आमदनी 4 लाख **हून** थी। इसके अतिरिक्त उसे 1 लाख **हून** प्रति वर्ष आमदनी वाले रायगढ़ सहित 12 अन्य किले भी समर्पित करने पड़े। इस घाटे की भरपाई बीजापुरी तालकोंकण और बालाघाट से की जानी थी। इसके अतिरिक्त शिवाजी के पुत्र को मुगल सेना में 5000 **ज़ात** का ओहदा प्रदान किया गया। यह जय सिंह की योजना के बिल्कुल अनुकूल था क्योंकि वह शिवाजी को मुगल सीमा से सटे महत्वपूर्ण इलाकों से हटाना चाहता था। इसी के साथ-साथ इससे शिवाजी और बीजापुर के शासकों के बीच संघर्ष के बीज भी बो गये क्योंकि शिवाजी को तालकोंकण और बालघाट के लिए बीजापुर से सीधे भिड़ना पड़ता।

हालांकि औरंगजेब इस प्रकार के प्रस्ताव को स्वीकार करने से थोड़ा हिचक रहा था। उसके लिए बीजापुर और मराठा दो अलग-अलग समस्याएं थीं और वह प्रत्येक के साथ अलग से निपटना चाहता था। औरंगजेब सैद्धांतिक तौर पर

बीजापुर पर आक्रमण करने के लिए तो सहमत हो गया परन्तु उसने इसके लिए मुगल फौज को अतिरिक्त सहायता देने से इंकार कर दिया। इसके अलावा उसने शिवाजी को केवल बीजापुरी बालाघाट देने की बात सामने रखी उसकी प्राप्ति भी बीजापुर अभियान की सफलता पर निर्भर थी। अतः इस स्थिति में जबकि बीजापुर और गोलकुंडा ने संधि कर ली थी और औरंगजेब किसी भी प्रकार की अतिरिक्त सहायता के लिए तैयार न था तथा दक्खन में मुगल खेमे में दिलेर खां के नेतृत्व में शिवाजी-विरोधी तत्वों की उपस्थिति के कारण जय सिंह के लिए सफलता की उम्मीद करना असंभव था।

बीजापुर-गोलकुंडा संधि (1666 ई.) को देखते हुए और मराठों का विश्वास जीतने के लिए उसने शिवाजी को औरंगजेब के पास आगरा जाने का निमंत्रण दिया। परन्तु मुगल दरबार में शिवाजी के तथाकथित अपमान (उसे 5000 **ज़ात** के ओहदे वाले अधिकारियों के समकक्ष रखा गया और उसका स्वागत एक निचले दर्जे के अधिकारी ने किया) के कारण शिवाजी का मुगल दरबार में भड़क उठने के फलस्वरूप उन्हें आगरा में बंदी बना लिया गया।

औरंगजेब की अनिच्छा और आगरा में शिवाजी की कैद ने जय सिंह की योजना को गहरा धक्का पहुंचाया। इस स्थिति में जय सिंह ने सम्राट से आग्रह किया कि दक्खन में मुगल सरदारों के आपसी मतभेद को मिटाने के लिए वे खुद दक्खन आएं। परंतु उत्तर-पश्चिम, फारस तथा यूसुफज़इयों के विद्रोहों में उलझे रहने के कारण औरंगजेब इस सुझाव को कार्यात्मक परिणति न प्रदान कर सका। अंततः आगरा के जेलखाने से शिवाजी के पलायन (1666 ई.) ने जय सिंह की रही-सही उम्मीदों पर भी पानी फेर दिया। जय सिंह को काबुल जाने का आदेश मिला और उसके स्थान पर युवराज मुअज्जम को दक्खन का मुगल वायसराय (मई, 1667 ई.) नियुक्त किया गया।

जय सिंह की योजना की असफलता दुर्भाग्यपूर्ण थी क्योंकि मुगल शिवाजी को समाप्त करने के लिए न तो बीजापुर की सहायता ले सकने में सफल हुए (1672-76 ई.) और न ही मराठों की सहायता से दक्खनी राज्यों पर ही कब्जा जमा सके (1676-79 ई.)।

10.5.3 तृतीय चरण : 1667-1680 ई.

आगरा से भागने के पश्चात् शिवाजी तुरंत मुगलों से मुठभेड़ करने के पक्ष में नहीं थे। इसके विपरीत वह उनसे मैत्रीपूर्ण संबंध (अप्रैल और नवम्बर, 1667 ई.) रखना चाहते थे। युवराज मुअज्जम ने खुशी-खुशी शिवाजी के पुत्र शम्भाजी को 5000 **ज़ात** का **मनसब** और बरार में **जागीर** दे दी (अगस्त, 1668 ई.)। औरंगजेब शिवाजी के साथ अपने बेटे की दोस्ती से सतर्क हो गया और उसे इसमें विद्रोह की गंध आने लगी। औरंगजेब ने औरंगाबाद स्थित मराठा प्रतिनिधियों प्रताप राव और नीराजी पंत को बंदी बनाने का आदेश दिया। इसी समय मुगलों ने शिवाजी को आगरा यात्रा के लिए दिए गये 2 लाख रुपये वसूलने के लिए बरार स्थित शिवाजी की **जागीर** पर हमला बोल दिया। इन घटनाओं से शिवाजी सतर्क हो गये और उसने अपने प्रतिनिधियों नीराजी पंत और प्रताप राव को औरंगाबाद छोड़ देने का हुक्म दिया। शिवाजी ने पुरन्दर की संधि (1665 ई.) के तहत मुगलों को दिए गये कई किलों पर आक्रमण किया। उसने 1670 ई. में कान्डना, पुरन्दर, माहुली और नानदेर पर कब्ज़ा जमा लिया। इसी समय युवराज मुअज्जम और दिलेर खां के बीच संघर्ष आरंभ हो गया। दिलेर खां ने युवराज पर शिवाजी से मिले होने का आरोप लगाया। आंतरिक कलह से मुगल सेना कमजोर हो गयी। औरंगजेब ने युवराज मुअज्जम के विश्वस्त आदमी जसवंत सिंह को वापस बुलाकर उसे बुरहानपुर भेज दिया। इस स्थिति का फायदा उठाकर शिवाजी ने दूसरी बार (30 अक्तूबर, 1670 ई.) सूरत को लूटा। इसके बाद मराठों को बरार और बगलाना में सफलता मिली (1670-71 ई.)। बगलाना में अहिवंत, मारकंड, रावल और जावल तथा कारिंज, औसा, नंदुरबार, सलहिर, मुलहिर, चौरागढ़ और हुलगढ़ के किले मराठों के कब्जे में आ गये।

मराठों की सफलता से मुगल सतर्क हो उठे। महाबत खां को दक्खन का सर्वेसर्वा बनाकर भेजा गया (नवंबर, 1670 ई.)। परन्तु उसे भी कोई खास सफलता नहीं मिली, परिणामस्वरूप उसे और युवराज मुअज्जम को 1672 ई. में वहां से हटा लिया गया। इस बार दक्खन की बागडोर बहादुर खां को सौंपी गयी (1673 ई.)।

इस बीच मराठों का सफलता अभियान जारी रहा। उन्होंने कोइल (जून, 1672 ई.) पर अधिकार जमा लिया। परंतु खानदेश और बरार (दिसंबर, 1672 ई.) में मुगलों ने उन्हें सफल नहीं होने दिया। 1673 ई. में बहादुर खां ने शिवनेर पर कब्जा जमा लिया। परंतु मुगलों की ये सफलताएं शिवाजी का रास्ता न रोक पायीं। आदिल शाह की मृत्यु (24 नवंबर, 1672 ई.) के बाद बीजापुर में फैली अव्यवस्था का उसने पूरा फायदा उठाया। उसका बेटा बहुत छोटा था (चार वर्ष का) और स्थायित्व कायम करना उसके वश की बात नहीं थी। शिवाजी ने बीजापुर से पनहाला (6 मार्च, 1673 ई.०), पारली (1 अप्रैल, 1673 ई.) और सतारा (27 जुलाई, 1673 ई.) के किलों पर अधिकार कर लिया। बीजापुर दरबार में कई गुट थे। बहलोल खां के नेतृत्व वाले गुट ने बीजापुर के पतन की सारी जिम्मेदारी खवास खां के गुट पर डाल दी। 1674 ई. में बहलोल खां ने सफलतापूर्वक मराठों को कनारा से पीछे धकेल दिया।

इसी समय उत्तर-पश्चिम में होनेवाली गड़बड़ियों के कारण दक्खन से फौज वापस बुलानी पड़ी और बहादुर खां के पास एक कमजोर सेना रह गयी। शिवाजी ने इस स्थिति का भरपूर फायदा उठाया। उसने 6 जून, 1674 ई. को अपने को राजा घोषित किया और इसके बाद तत्काल मई, 1674 ई. में बहादुर खां के खेमे को लूट लिया। 1675 ई. के आरंभ में मुगल-मराठा शांति वार्ता असफल रही।

बहादुर खां ने शिवाजी के खिलाफ बीजापुर से संधि करनी चाही (अक्टूबर, 1675 ई.) परन्तु इसी समय खवास खां ने बहलोल खां को उखाड फेंका (11 नवंबर, 1675 ई.)। इस प्रकार बहादुर खां की योजना फलीभूत न हो सकी।

इसी बीच औरंगजेब ने बहादुर खां पर कड़े प्रतिबंध लगा दिये। दूसरी तरफ मराठों का सितारा दिन पर दिन बुलंद होता जा रहा था। दिलेर खां गोलकुंडा और शिवाजी के खिलाफ मुगल-बीजापुर गठबंधन करना चाहता था। परन्तु गोलकुंडा के वजीर मदन्ना और अकन्ना की कूटनीति (1677 ई.) के कारण उसे इसमें सफलता नहीं मिली। इसके बदले मदन्ना ने शिवाजी से संधि कर ली और मुगलों से सुरक्षा के बदले शिवाजी को 1 लाख **हून** देने को राजी हो गया। उसने कोल्हापुर जिले सहित कृष्णा नदी के पूर्व में शिवाजी के आधिपत्य को स्वीकार कर लिया। शिवाजी के कर्नाटक अभियान (1677-78 ई.) को गोलकुंडा का भी समर्थन प्राप्त हुआ।

परंतु बाद में गोलकुंडा शासक को जिंजी और अन्य क्षेत्र देने के अपने वादे से शिवाजी मुकर गये। अतः दोनों के बीच मतभेद पैदा हो गये और गोलकुंडा शासक ने शिवाजी को वार्षिक भुगतान देना बंद कर दिया। शिवाजी ने घूस का सहारा लेकर बीजापुर के किले पर कब्जा करना चाहा। शिवाजी के इस व्यवहार ने बीजापुर शासक को और भी नाराज कर दिया।

इसी समय मराठा दरबार में उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर कुछ मतभेद पैदा हो गये। शिवाजी ने अपने छोटे बेटे राजाराम को **देस** और कोंकण प्रदान किया, जबकि बड़े लड़के शम्भाजी को नये क्षेत्र कर्नाटक का भार सौंपा। शिवाजी ने राजाराम की नाबालिग उम्र को देखते हुए ऐसा कदम उठया था क्योंकि नये हासिल किए गये क्षेत्र कर्नाटक को संभालना उसके वश की बात नहीं थी। परंतु शम्भाजी **देस** जैसे लाभप्रद इलाके को छोड़ने के लिए तैयार नहीं था। दिलेर खां (1678 ई.) ने इस स्थिति का फायदा उठाकर शम्भाजी की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया और वचन दिया कि वह **देस** और कोंकण हासिल करने में उसकी मदद करेगा। शम्भाजी ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और मुगलों द्वारा उसे 7000 **ज़ात** का **मनसब** प्रदान किया गया (दिसम्बर, 1678 ई.)।

इसी समय (1678 ई.) गोलकुंडा, बीजापुर और मुगलों के गठबंधन का विचार सामने आया ताकि मराठों की शक्ति को नष्ट किया जा सके, परंतु सिद्दी मसूद (बीजापुर दरबार में दक्खनी दल का नेता) और शिवाजी की संधि ने इस योजना पर पानी फेर दिया। दिलेर खां बीजापुर पर कब्जा जमाने के लिए आगे बढ़ा, परंतु ठीक समय पर मराठों के हस्तक्षेप से उसकी यह योजना भी असफल रही (अगस्त, 1679 ई.)।

अतः जय सिंह की वापसी (1666 ई.) से लेकर औरंगजेब द्वारा आक्रामक नीति अपनाए जाने तक (1680 ई.) इस तृतीय चरण में पूरी तरह अव्यवस्था और गड़बड़ी का माहौल बना रहा। मुगल किसी एक नीति पर टिक न सके और इसके बदले वे दिशाहीन और लक्ष्यहीन ढंग से काम करते रहे। न तो उन्हें मराठों को दोस्त बनाने में सफलता मिली न ही दक्खनी राज्यों को ही वे अपने विश्वास में ले सके तथा न ही इन दक्खनी राज्यों और शिवाजी का दमन कर सके।

10.5.4 चौथा चरण : 1680-1707 ई.

दक्खनी इतिहास की दृष्टि से 1680 ई. का वर्ष बहुत महत्वपूर्ण है। इसी वर्ष शिवाजी की मृत्यु हुई (23 मार्च) और इसी वर्ष औरंगजेब ने खुद दक्खनी मसले को हल करने का निश्चय किया। अब मुगलों ने पूर्ण आधिपत्य की आक्रामक नीति अपनाई।

आगे आने वाला समय मराठों के लिए सुगम नहीं था। शिवाजी के राज्य के बंटवारे को लेकर उसके बेटों में मतभेद पैदा हो गये और परिणामस्वरूप मराठा सरदारों को अपनी शक्ति दिखाने का मौका मिल गया। पश्चिमी प्रांत के **सचिव** और वायसराय अन्नाजी दात्तो तथा **पेशवा** मोरोपंत के बीच की आपसी ईर्ष्या से स्थिति और भी बिगड़ गयी। मराठा सरदारों ने शम्भाजी के स्थान पर राजाराम को राजा घोषित कर दिया। शम्भाजी ने तेजी से साथ कार्यवाई की और राजाराम तथा अन्नाजी दात्तो को कैद कर लिया (जुलाई, 1680 ई.)। अन्नाजी दात्तो ने विद्रोही मुगल युवराज अकबर की सहायता से एक बार फिर सफलता प्राप्त करने की कोशिश की। जैसे ही शम्भाजी को इस तथ्य का पता चला उसने दमनात्मक नीति का सहारा लेना शुरू कर दिया। शिवाजी के शासन के प्रति वफादार व्यक्तियों को इस दमन का सामना करना पड़ा। इस दमन से घबराकर बहुत से शिर्के परिवार के सदस्यों ने मुगलों की शरण ली। इससे मराठा राज्य में पूर्ण अव्यवस्था और अराजकता फैल गयी। स्थिति को ठीक करने के बजाय शम्भाजी शराब और वैभव की गहरी खाई में गिरता चला गया। जल्द ही शिवाजी की सेना का अनुशासन समाप्त हो गया। पहले सेना के साथ स्त्रियों को ले जाना वर्जित था परंतु अब यह नियम टूट गया। इसका एक निश्चित प्रभाव पड़ा। इसके कारण अभी-अभी जन्मा मराठा राज्य कमजोर हो गया जिसमें शक्तिशाली मुगलों का सामना करने की शक्ति नहीं थी।

दूसरी तरफ दक्खन में अपने प्रवास के पहले चार वर्षों में औरंगजेब ने दक्खनी राज्यों की सहायता से मराठों को दबाने का काम किया जिन्होंने विद्रोही युवराज अकबर को शरण दे रखी थी। लगातार दबाव बनाए रखने के बावजूद 1680-84 ई. तक मुगलों को ज्यादा सफलता हासिल नहीं हो सकी। 1684 ई. में औरंगजेब ने यह महसूस किया कि उसे पहले गोलकुंडा और बीजापुर से निपटना चाहिए। इसके परिणामस्वरूप मुगलों ने बीजापुर (1686 ई.) और गोलकुंडा (1687 ई.) पर कब्जा कर लिया। लेकिन इस निर्णय (ऐसी ही योजना जय सिंह ने 1665 ई. में मराठों के साथ मिलकर बनाई थी) में शायद देर हो चुकी थी। इस समय तक मराठा न केवल मजबूत हो गये थे बल्कि उन्होंने कर्नाटक में प्रतिरक्षा की दूसरी पंक्ति भी निर्मित करने में सफलता प्राप्त कर ली थी। अब वे भी एक छोटे-मोटे सरदार नहीं थे बल्कि अब यहां एक राजा था जो दक्खनी शासकों के समकक्ष था।

जब औरंगजेब बीजापुर और गोलकुंडा (1686-87 ई.) का मामला हल करने में व्यस्त था तब मराठा औरंगाबाद से

लेकर बुरहानपुर तक के मुगल इलाके को रौंद रहे थे। परंतु इस समय बीजापुर और गोलकुंडा पर मुगल विजय से मुगल सेना की शक्ति और स्रोत में अपार वृद्धि हुई थी। युवराज अकबर भी ईरान भाग गया था (1688 ई.)। शम्भाजी के व्यवहार से बहुत से मराठा सरदार नाराज होकर मुगलों से जा मिले थे। इन परिस्थितियों में मुगलों ने शम्भाजी को कैद कर (फरवरी, 1689 ई.) अंततः मृत्यु दंड (11 मार्च, 1689 ई.) दे दिया।

शम्भाजी की मृत्यु (1689 ई.) के बाद मराठा राजनीति में कई नये आयाम उभरे। बीजापुर और गोलकुंडा को हराने के बाद मुगलों को कई स्थानीय तत्वों जैसे **नायकों, पेलमों, देशमुखों** आदि के प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। मुगल प्रशासन व्यवस्था लागू किये जाने से दक्खन में कृषीय तनाव पैदा हुए। स्थानीय भूमिपति कुलीन वर्ग के स्थान पर नया वर्ग सामने आया—मुगल **जागीरदार** और राजस्व के ठेकेदार। **जागीरदार** राजस्व वसूल न कर पाने की स्थिति में अपनी **जागीर** को एक मोटी आमदनी के रूप में भुगतान लेकर ठेकेदारों को राजस्व वसूल करने की छूट देने लगे। इससे जिन लोगों का भू-राजस्व एकत्रित करने का अधिकार छीना गया वे विद्रोही हो गये। किसानों को दोनों तरफ से दमन का सामना करना पड़ा। (विवरण के लिए खंड 5, इकाई 18, 19 देखिए)। इसके अलावा इसी बीच ज्यादातर **मनसबदार** दक्षिण से भर्ती किये गये। केवल 1000 **ज़ात** के ऊपर के मराठा **मनसबदारों** की संख्या ही 13 (शाहजहां) से बढ़कर 96 (औरंगजेब) हो गयी, जबकि औरंगजेब के समय में दक्खनी **मनसबदारों** की संख्या 575 तक पहुंच गयी। इससे **जागीरों** पर दबाव पड़ा और **जागीर** व्यवस्था संकटग्रस्त हो गयी। दक्खनी और **खानजाद** कुलीनों के बीच संघर्ष आरंभ हो गये। इसके अलावा लगातार होने वाले युद्धों का भी मुगल खज़ाने पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा था। मुगल सीमा के विस्तार से नई समस्याएं सामने आयीं। यह नया क्षेत्र मराठों के हमले का लगातार शिकार होता रहता था। इसके अलावा शम्भाजी की मृत्यु के बाद मराठा तेजी से उभरे जिसके फलस्वरूप 1693 ई. के बाद मुगलों को कई बार हार का सामना करना पड़ा।

मराठा तेजी से राजाराम, जो कि प्रतापगढ़ भाग गया था (5 अप्रैल, 1689 ई.) के इर्द-गिर्द इकट्ठा होने लगे। परन्तु मुगलों के दबाव में आकर राजाराम को पनहाला में शरण लेनी पड़ी जहां वह मुगलों से अपनी रक्षा कर सका। लेकिन मुगलों ने जल्द ही रायगढ़ और पनहाला पर कब्जा जमा लिया (नवंबर, 1689 ई.) और (सितम्बर, 1689 ई.)। राजाराम को भागकर जिंजी जाना पड़ा। 1700 ई. में सतारा और सिंहगढ़ मुगलों के कब्जे में चला गया। परन्तु इन सबके बावजूद मुगल न तो राजाराम को पकड़ सके न ही मराठों की शक्ति को कुचल सके। मराठों ने लगातार अपना संघर्ष जारी रखा। उन्होंने जल्द ही अपने खोये हुए इलाके वापस ले लिए। मुगलों को न केवल जीते हुए इलाकों से हाथ धोना पड़ा बल्कि इसे पाने के लिए उन्हें अत्यधिक कष्टों और परेशानियों का सामना करना पड़ा। इससे मुगल सेना का नैतिक बल टूट गया, उसमें एक प्रकार का बिखराव और शिथिलता आ गयी। अब जाकर औरंगजेब को इस प्रकार के लंबे अभियान की असार्थकता महसूस हुई और वह अहमदाबाद की ओर लौट पड़ा। किन्तु इससे पहले कि वह मैत्रीपूर्ण नीति अपनाता 1707 ई. में उसकी मृत्यु हो गयी।

संक्षेप में सतीश चंद्र ने सही ही लिखा है कि औरंगजेब की असफलता का मुख्य कारण यह था कि वह मराठा आंदोलन के स्वरूप को ठीक से पहचान न सका। शिवाजी को मात्र एक **भूमिया** समझना उसकी भूल थी। मराठों के पास एक लोकप्रिय आधार था और उन्हें स्थानीय भूमिपतियों (**वतनदारों**) का समर्थन प्राप्त था। मुगल प्रशासनिक व्यवस्था लादे जाने के उसके प्रयत्न के कारण स्थानीय तत्वों के बीच अव्यवस्था की स्थिति पैदा हो गयी और किसानों का शोषण हुआ। मुगल **मनसबदारों** के लिए उनके दक्खनी **जागीरों** से कुछ भी वसूल करना, लगभग असंभव हो गया। शम्भाजी को मृत्यु-दंड दिया जाना एक और भारी भूल थी। औरंगजेब मराठों के बीच आतंक फैलाना चाहता था, परन्तु उसे इसमें सफलता नहीं मिली। वह न तो मराठों को दबा सका न ही शाहू को अपने पास रखकर कोई शर्त मनवा सका।

हम यहां 1707 ई. तक ही मराठा शक्ति के उदय पर चर्चा कर रहे हैं। शाहू और 18वीं शताब्दी के आरंभ में पेशवा शक्ति के उदय की प्रक्रिया की चर्चा खंड 9 की इकाई 36 में की जायेगी।

बोध प्रश्न 2

1) बीजापुर शासकों के अधीन मराठा शक्ति के उदय पर एक टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

2) निम्नलिखित का मिलान कीजिए :

(i) शिवाजी — सिंदखेर

(ii) यशवंत राव — मोरे

(iii) चन्द्र राव भोंसले

(iv) जादव राव मावल

(v) जेद्घे नायक जावली

3) जय सिंह की दक्खन नीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।

....

....

....

....

....

10.6 मराठा और जंजीरा के सिद्दी

कल्याण और भिवण्डी पर कब्जा (1658 ई.) करने के तुरंत बाद शिवाजी ने वहां नौ सैनिक अड्डा बनाया। दक्षिण कोंकण तट पर कब्जा करने के पश्चात् (1661 ई.) शिवाजी की नौ सैनिक शक्ति और भी मजबूत हो गयी। इस विस्तार से मराठों की सीधी मुठभेड़ जंजीरा (बंबई से 45 मील दक्षिण में स्थित पहाड़ी द्वीप) के सिद्दियों की नौ सैनिक शक्ति से हुई।

सिद्दी अबीसीनिया के निवासी थे जो 15वीं शताब्दी में जंजीरा में आकर बस गये थे। उन्हें अहमदनगर के शासकों से दांडा-राजपुरी का क्षेत्र प्राप्त हुआ था। लेकिन निजाम शाही राज्य के समाप्त हो जाने पर उन्हें स्वतंत्र रूप से कार्य करने का मौका मिला था। 1636 ई. की संधि के बाद जब पश्चिमी तट पर बीजापुर का अधिकार हो गया, तब सिद्दियों और बीजापुर शासकों के मध्य लंबे संघर्ष का प्रारंभ हुआ और अन्त में उन्होंने आत्मसमर्पण कर बीजापुर की अधीनता स्वीकार कर ली। तत्पश्चात् वे नगोथना से लेकर बानकोट तक के क्षेत्र में बीजापुर के **वज़ीर** के रूप में कार्य करने लगे। उन्होंने बीजापुर के शासकों से समुद्र के रास्ते होकर मक्का जाने वाले तीर्थयात्रियों की रक्षा का वादा किया। सिद्दियों के पास मजबूत नौ सैनिक बेड़ा था।

सर्वप्रथम मराठों की मुठभेड़ सिद्दियों से अफजल खां का पीछा करते समय, कोंकण अभियान के दौरान हुई (1659 ई.)। बीजापुर के प्रतिनिधि के रूप में सिद्दियों ने अफजल खां का समर्थन किया था। रघुनाथ बल्लाल के नेतृत्व में शिवाजी ने सिद्दियों को दबाने के लिए एक मजबूत सेना भेजी। मराठों ने सिद्दियों से ताल, घोनसाल और दांडा तक का बृहद् समुद्रतट छीन लिया। परन्तु सिद्दियों ने अपना संघर्ष जारी रखा। पुरन्दर की संधि (1665 ई.) के तहत मुगल जंजीरा को मराठों को सौंपने के लिए तैयार हो गये थे अगर वे जंजीरा पर कब्जा करने में सफल हो सकें तो। मराठों ने फिर से 1669-70 ई. में आक्रमण शुरू किया परंतु बीजापुर-मुगल संयुक्त सेना के आक्रमण के कारण वे इसमें सफल नहीं हो पाये। इसके बाद (1671 ई.) सिद्दियों की पूरी नौ सेना मुगलों को हस्तांतरित कर दी गयी और सिद्दी नौ सैनिक अधिकारियों (सिद्दी कासिम और सिद्दी खैरियत) को मुगल **मनसबदार** बना दिया गया और बीजापुर की शर्तों के अनुरूप मुगलों ने सिद्दी जहाजी बेड़े पर अधिकार कर लिया। मुगलों ने सिद्दी सेनानायकों को याकूत खां की उपाधि प्रदान की। जल्द ही सिद्दियों ने मराठों से दांडा वापस ले लिया (1671 ई.)। शिवाजी ने अंग्रेजों की सहायता लेनी चाही परन्तु इसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। इसके बाद दोनों के बीच समय-समय पर लम्बा संघर्ष चला (1672-80 ई.)। शाम्भाजी के बाद यह दुश्मनी ज्यादा तीक्ष्ण हो गयी। प्रारंभ से ही (1681 ई.) सिद्दियों ने मराठा राज्य क्षेत्र में रायगढ़ तक आक्रमण किये। 1682 ई. में रघुनाथ प्रभु उनके आक्रमण को रोकने में सफल रहा।

10.7 मराठा, अंग्रेज और पुर्तगाली

दाभोल बंदरगाह पर कब्जा करने (जनवरी, 1660 ई.) के बाद मराठा अंग्रेजों के सम्पर्क में आये। आरंभ से ही दोनों के संबंध तनावपूर्ण रहे। फरवरी, 1660 ई. में मराठों ने अफजल खां के युद्ध पोतों की मांग की। मार्च, 1661 ई. में मराठों ने राजापुर के अंग्रेज कारखाने (factory) पर हमला बोल दिया क्योंकि यहीं से बीजापुर के शासक को ग्रेनेडों की आपूर्ति हो रही थी और वह इसका उपयोग मराठों के पनहाला किले पर आक्रमण के लिए कर रहा था। मराठों को अस्त्र न देने के कारण शिवाजी ने फिर से अंग्रेजों को परेशान किया। मई, 1672 ई. में अंग्रेजों ने समझौता करना चाहा परंतु वे सफल नहीं हुए क्योंकि वे एक लाख रुपये का हरजाना नहीं दे सके। 1673 ई. में अंग्रेजों ने थामस निकोलस के नेतृत्व में एक प्रतिनिधिमंडल भेजा परन्तु इसका भी कोई नतीजा नहीं निकला। लेकिन 1674 ई. में हेनरी ऑक्सिनडेन के नेतृत्व में आये प्रतिनिधिमंडल का शिवाजी ने स्वागत किया और 50 तोपखाने और बंदूकें खरीदने की इच्छा प्रकट

की। इसके बाद (1675 ई.) राजापुर में अंग्रेजों का कारखाना फिर से खुल गया। 1675 ई. में अंग्रेजों ने मराठों से खानदेश में धरनगांव स्थित कारखाने के नुकसान पहुंचाये जाने की एवज में हरजाना मांगा। लंबे वाद-विवाद के बाद भी शिवाजी इसके लिए राजी नहीं हुए। अंततः दिसम्बर, 1682 ई. में शम्भाजी ने राजापुर के कारखाने को बंद करवा दिया।

मराठों और पुर्तगालियों का संबंध भी आरंभ से ही सौहार्दपूर्ण नहीं रहा। पुर्तगालियों ने शिवाजी के विरुद्ध जंजीरा के सिद्धियों का समर्थन किया। उन्होंने शिवाजी द्वारा निष्कासित दक्षिण रत्नागिरि के **देसाइयों** को गोवा में शरण दे रखी थी। शिवाजी ने दमन क्षेत्र से **चौथ** की भी मांग की। पश्चिमी तट पर शिवाजी की सेना की उपस्थिति से भी पुर्तगालियों के व्यापार में बाधा उत्पन्न होती थी। इन मतभेदों के बावजूद पुर्तगालियों ने मराठों के साथ कभी भी संघर्ष का रास्ता नहीं अपनाया बल्कि उनसे दोस्ताना व्यवहार बनाये रखा। पुर्तगाली गवर्नर ने भी कभी खुलकर शिवाजी के विरोधियों का समर्थन नहीं किया। जून, 1659 ई. में जब शिवाजी ने पुर्तगालियों को अबीसीनियों और दांडा के सिद्दियों की सहायता न करने को कहा तब उसने अपने अधिकारियों को इसका कड़ाई से पालन करने का निर्देश दिया। दिसंबर, 1667 ई. में दोनों के बीच संधि हुई और शिवाजी ने पुर्तगाली व्यापार में व्यवधान न डालने का आश्वासन दिया। पुर्तगालियों ने दक्षिण रत्नागिरि के **देसाइयों** को भी निकाल बाहर किया। यह संधि पुनः 10 फरवरी, 1670 ई० को नवीकृत की गयी। उस समय शिवाजी ने पुर्तगाली सीमा से लगे अपने इलाकों में किला न बनाने का भी आश्वासन दिया। परंतु शिवाजी के शासन काल के अंतिम समय (1676-77 ई०) में **चौथ** के भुगतान को लेकर दोनों के संबंध तनावपूर्ण हो गये। परंतु शिवाजी की असमय मृत्यु से सीधी टक्कर टल गयी। 1683 ई० में शिवाजी के पुत्र शम्भाजी ने खुद चौल और गोवा पर आक्रमण किया परंतु मुगल दबाव के कारण उसे पीछे हटना पड़ा।

बोध प्रश्न 3

1) सिद्दी कौन थे?

....

....

....

....

....

2) मराठा-पुर्तगाली संबंधों पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

....

....

10.8 मराठों की प्रशासनिक संरचना

इस भाग में हम मराठों के केन्द्रीय और प्रांतीय प्रशासनिक व्यवस्था तथा सैनिक प्रबंध की चर्चा करेंगे। मराठों की राजस्व व्यवस्था, वित्त, कृषीय संबंधों तथा ग्रामीण समुदायों की चर्चा खंड 5 की इकाई 18 और 19 में की जाएगी।

मराठा प्रशासन मूलतः दक्खनी संरचना पर आधारित था, परंतु इसमें कुछ तत्व मुगल प्रशासनिक व्यवस्था के भी शामिल थे।

10.8.1 केन्द्रीय प्रशासन

मराठा राजनैतिक व्यवस्था मूलतः एक परिष्कृत केन्द्रीकृत निरंकुश राजतंत्र था। राजा की स्थिति सर्वोच्च थी। राजा का मुख्य उद्देश्य अपनी प्रजा को खुशहाल और समृद्ध बनाना था **(राजा कलस्य करणम्)**।

राजा की सहायता के लिए एक मंत्रिपरिषद् थी, जो **अष्टप्रधान** के नाम से जानी जाती थी :

(i) **पेशवा** (प्रधानमंत्री) : वह नागरिक और सैनिक मामलों का सर्वोच्च अधिकारी था।

(ii) **मजूमदार** (लेखा परीक्षक) : वह राज्य की आय और व्यय का लेखा-जोखा रखता था।

(iii) **वकील** : वह राजा के व्यक्तिगत मामलों की देखरेख करता था।

(iv) **दाबिर** : विदेश सचिव

(v) **सुरनिस** (अधीक्षक) : वह सभी प्रकार के राजकीय पत्र-व्यवहारों की देखरेख करता था।

(vi) **पंडित राव** : धार्मिक प्रधान

(vii) **सेनापति** : सेना का प्रधान

(viii) **न्यायाधीश** : मुख्य न्यायाधीश

अष्टप्रधान न तो शिवाजी की देन थे न ही उसने अपने राज्यारोहण के समय इसे पहली बार संगठित किया था। **पेशवा, मजूमदार, वकील, दाबिर, सुरनिस** (और **सरनौबत**) आदि पद दक्खन शासन व्यवस्था में भी मौजूद थे।

पंडित राव और **न्यायाधीश** के अतिरिक्त सभी अधिकारियों को सैनिक अभियान में भाग लेना पड़ता था। शिवाजी के अधीन ये पद न तो आनुवांशिक थे न ही स्थाई। वे राजा के कृपापात्र बने रहने तक पद पर बने रहते थे और अक्सर उनका स्थानांतरण किया जाता था। उन्हें सीधे राजकोष से वेतन प्राप्त होता था और किसी भी नागरिक या सैनिक अधिकारी को **जागीर** नहीं दी जाती थी। बाद में पेशवा के अधीन ये पद आनुवांशिक और स्थाई प्रकृति के हो गये। मंत्रिपरिषद राजा को सलाह दे सकती थी परंतु उनकी सलाह मानने के लिए राजा बाध्य नहीं था।

प्रत्येक **अष्टप्रधान** की सहायता के लिए आठ सहायक होते थे : **दीवान, मजूमदार, फड़निस, सबनिस, कारखानीस, चिटनिस, जमादार** और **पोटनिस**।

अष्टप्रधान के बाद **चिटनिस (सचिव)** का स्थान आता था जो सभी राजनैतिक पत्र-व्यवहार को देखता था और शाही पत्र लिखता था। प्रांतीय और जिला अधिकारियों से भी वही पत्र-व्यवहार करता था। परंतु किलेदारों के पत्रों का जवाब **फड़निस** दिया करता था। **फड़निस** शिवाजी के अधीनस्थ सचिवालय का अधिकारी था। यह पद पेशवा के काल में प्रमुख हो गया। **पोटनिस** राजकोष की आय और व्यय की देखभाल करता था जबकि **पोतदार** एक जांच अधिकारी था।

10.8.2 प्रांतीय प्रशासन

राज्य **मौजा, तरफ** और **प्रांतों** में विभक्त था। ये सभी इकाइयां दक्खनी शासकों के अधीन मौजूद थीं और यह शिवाजी की देन नहीं थी। परंतु उन्होंने इसे संगठित किया और नया नामकरण किया। **मौजा** सबसे छोटी इकाई थी। इसके बाद **तरफ** का स्थान आता था, जिसमें **हवलदार, कारकुन** और **परिपत्याकर** नियुक्त होते थे। राज्यों को **प्रांत** के नाम से जाना जाता था : यहां **सूबेदार, कारकुन** (या मुख्य **देशाधिकारी**) कार्य संभालते थे। विभिन्न प्रांतों में **सूबेदारों** पर एक **सर सूबेदार** होता था जो **सूबेदारों** के कार्यों का निरीक्षण करता था और उन पर नियंत्रण रखता था। प्रत्येक **सूबेदार** के अधीन आठ अधिकारी थे : **दीवान, मजूमदार, फड़निस, सबनिस, कारखानिस, चिटनिस, जमादार** और **पोटनिस**। बाद में पेशवाओं के अधीन **तरफ, परगना, सरकार** और **सूबा** शब्दों का प्रयोग एक दूसरे के पूरक के रूप में किया जाने लगा।

शिवाजी के अधीन कोई भी अधिकारी आनुवांशिक और स्थाई नहीं था। अक्सर सभी अधिकारियों का स्थानांतरण होता रहता था। परंतु पेशवाओं के अधीन **कमविसदार** और **ममलतदार** के पद स्थाई हो गये। **ममलतदारों** पर नियंत्रण रखने के लिए **दरखदार** (वसूली अधिकारी) होते थे। ये आनुवांशिक प्रांतीय पदाधिकारी थे। ये **ममलतदारों** और अन्य नौ सैनिक और सैनिक अधिकारियों पर नियंत्रण रखने का कार्य करते थे। **ममलतदार** न तो उन्हें अपदस्थ कर सकते थे न ही उन्हें पहले से ही निर्देशित कार्य के अतिरिक्त किसी अन्य कार्य को करने का निर्देश दे सकते थे। प्रांतीय स्तर के आठों अधिकारी **ममलतदार** के प्रति जिम्मेदार नहीं थे। बल्कि वे उनकी शक्ति पर नियंत्रण रखने का कार्य करते थे।

10.8.3 सैनिक प्रशासन

शिवाजी के सैनिक संगठन में किलों को सबसे अधिक महत्व दिया गया। शिवाजी ने अपने राज्य में किलों का जाल-सा बिछा दिया। कोई भी **तालुक** अथवा **परगना** बिना किले के नहीं था। अपने जीवन-काल में शिवाजी ने लगभग 250 किलों का निर्माण कराया। किसी भी एक अधिकारी को किले का पूरा भार नहीं सौंपा जाता था। प्रत्येक किले में एक **हवलदार**, एक **सबनिस** और एक **सरनौबत** होता था। बड़े किलों में पांच से लेकर दस तक **सरनौबत** हुआ करते थे। ये सभी अधिकारी समान पद और स्तर के थे और उनका अक्सर स्थानांतरण हुआ करता था। इस व्यवस्था से प्रत्येक अधिकारी पर नियंत्रण रखा जा सकता था। **हवलदार** के पास किले की चाबियां होती थीं। **सबनिस** सभी लोगों की हाज़िरी लिया करता था और सभी प्रकार के सरकारी पत्र-व्यवहार किया करता था। वह **प्रांत** (किले के अधिकार क्षेत्र में) के राजस्व आकलन की भी देखरेख करता था। **सरनौबत** अस्त्र भण्डार की देखरेख किया करता था। इसके अतिरिक्त **कारखानिस** अनाज भंडार और इससे सम्बद्ध अन्य जरूरतों की देखरेख किया करता था। **कारखानिस** प्रतिदिन के आय और व्यय का भी हिसाब रखता था। किसी के पास असीम शक्तियां नहीं थी। हालांकि **सबनिस** लेखा अधिकारी था, परंतु सभी आदेशों पर **हवलदार** और **कारखानिस** की मुहर लगानी आवश्यक होती थी। दूसरे अधिकारियों की भी ऐसी ही स्थिति थी। कोई एक अधिकारी शत्रु के सामने किले को समर्पित नहीं कर सकता था। इस

प्रकार नियंत्रण और संतुलन की व्यवस्था कायम कर शिवाजी ने सभी अधिकारियों को अपने नियंत्रण में रखा। किसी भी अधिकारी को जाति संगठन बनाने की इजाजत नहीं थी। यह भी स्पष्ट रूप से निर्धारित था कि **हवलदार** और **सरनौबत** मराठा होंगे जबकि **सबनिस** ब्राह्मण और **कारखानिस** प्रभु (कायस्थ) जाति से लिया जाता था।

शिवाजी का सैन्य संगठन कोई नवीन प्रयोग नहीं था। बीजापुर के मौहम्मद आदिल शाह के अधीन भी किले का भार तीन अधिकारियों के ऊपर रहता था। उनका स्थानांतरण भी किया जाता था। पेशवा के शासन काल में भी शिवाजी द्वारा स्थापित सैन्य संगठन ही कार्यरत रहा।

शिवाजी की सेना में छापामार युद्ध और पहाड़ी युद्ध में निपुण घुड़सवारों और सशस्त्र सेना के साथ हल्के हथियार और अन्य हल्की युद्ध सामग्री होती थी। मेवाली और हेतकारी सबसे अच्छे सैनिक थे।

शिवाजी की थल सेना की सबसे छोटी इकाई में 9 सदस्य होते थे जिसका प्रधान **नायक** होता था। इस प्रकार की पांच इकाइयों का प्रधान एक **हवलदार** होता था। दो से लेकर तीन **हवलदारों** के ऊपर एक **जुमलेदार** होता था। दस **जुमलेदारों** के ऊपर एक **हजारी** और सात **हजारियों** के ऊपर एक **सरनौबत** हुआ करता था।

शिवाजी की घुड़सवार सेना में **बारगीर** और **सिलेदार** हुआ करते थे। **बारगीर** सैनिकों को घोड़े और अस्त्र राज्य की तरफ से दिये जाते थे जबकि **सिलेदार** को खुद इसका इंतजाम करना होता था। 25 **बारगीरों** के एक दल पर एक मराठा **हवलदार** नियुक्त होता था : पांच ऐसे **हवलदारों** को मिलाकर एक **जुमला** बनता था। 10 **जुमलों** पर एक **हजारी** और पांच **हजारी** पर एक **पंच हजारी** होता था। **पंच हजारी सरनौबत** के नियंत्रण मे रहते थे। **सिलेदार सरनौबत** के अधीन कार्य करते थे। प्रत्येक 25 घोड़ों के एक दल के साथ एक पानी ढोने वाला और एक नाल लगाने वाला हुआ करता था। बाद में पेशवाओं के अधीन पिंडारियों (ये डाकू और लुटेरे थे) को भी सेना के साथ चलने की अनुमति मिल गयी। अपनी सेवा के बदले उन्हें **पलपट्टी** (जो युद्ध लूट का 25 प्रतिशत था) वसूल करने का अधिकार था। वे न तो दुश्मन को बख्शते थे न दोस्त को, न ही साधारण जनता को और न ही मंदिरों को। वे अपनी इच्छा से लूट-मार करते थे। शिवाजी की सेना में एक कार्यकुशल जासूस विभाग भी था। बहीरजी नायक जादव इस विभाग का प्रमुख था।

शिवाजी की सेना में अंगरक्षक भी थे। ये 20, 30, 40, 60 और 100 की संख्या में लामबंद होते थे। जरूरत पड़ने पर **वतनदारों** को भी सैन्य सहायता देने के लिए कहा जाता था। परंतु शिवाजी **वतनदारों** और **सिलेदारों** की सैन्य शक्ति पर कम ही विश्वास रखते थे। शिवाजी अपने सैनिकों को नकद भुगतान करते थे। घायल सैनिकों को अतिरिक्त भत्ता और विधवाओं को राज्य की तरफ से पेंशन मिलती थी। पेशवाओं के अधीन पूरे देश को सैनिक इलाकों में विभक्त कर दिया गया। वे सामंती सेनाओं पर अधिक निर्भर थे। ये सामंती सरदार किसानों से अपने हक से ज्यादा रकम वसूल किया करते थे।

पेशवाओं ने अलग से तोपखाना विभाग बनाया। यहां तक कि तोप और गोला-बारूद बनाने का कारखाना भी उन्होंने स्थापित किया।

बाद में, पेशवाओं के अधीन घुड़सवार सेना की शक्ति में वृद्धि हुई। वे अपने सैन्य दल—**खासगी पगा**—की देखभाल खुद करते थे। पेशवाओं ने यूरोपीय प्रारूप पर अनुशासित सैन्य दल बनाने की कोशिश की। इसे **कम्पूस** के नाम से जाना गया। पर वे भी जल्द ही भ्रष्ट हो गये और अपने अन्य साथियों के समान वे भी राज्य-क्षेत्रों को लूटने लगे।

शिवाजी की सैन्य शक्ति तेज गति में निहित थी, परन्तु पेशवा के खेमे विभिन्न दिशाओं में मीलों तक फैले होते थे। शिवाजी ने कड़े अनुशासन पर विशेष बल दिया। पेशवाओं के अधीन यह अनुशासन कायम न रह सका। मराठा सेना आराम तलब हो गयी। उनके पास बहुमूल्य तंबू और कई तरह के साजो-सामान हुआ करते थे। शराब और औरत का प्रचलन हो गया। शिवाजी के शासनकाल में इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। शिवाजी ने कभी भी कोई स्त्री—महिला दास या नर्तकी—को सेना के साथ नहीं जाने दिया। पेशवा के शासनकाल में यहां तक कि एक साधारण घुड़सवार भी अपने साथ महिलाओं का एक दल, नर्तकी, बाजीगर और फकीरों को लेकर चलता था। पेशवा सेना को अमूमन **जागीर (सरअन्जम)** के रूप में भुगतान किया जाता था। इन सभी से पेशवाओं के अधीन मराठों की सैन्य शक्ति में आयी गिरावट का साफ पता चलता है।

शिवाजी अपनी प्रजाति के लोगों को सेना में भर्ती होने के लिए प्रोत्साहन देते थे, परन्तु नौ सेना में अनेक मुसलमान भी थे। लेकिन पेशवाओं ने सभी धर्म और जाति के लोगों को सेना में भर्ती किया, जैसे राजपूत, सिक्ख, रोहिला, सिंधी, गोसाई, कन्नड, अरब, तेलुगु, बीदर वासी और ईसाई (यूरोपवासी)।

10.8.4 नौ सेना

कोंकण पर कब्जा जमाने के बाद शिवाजी ने एक मजबूत नौ सेना का भी गठन किया। उनके जहाजी बेड़े में **घुराब** (बंदूक से लैस नाव) और **गल्लिवत** (खेने वाली नावें जिसमें 2 मूल और 40-50 पतवार होते थे) शामिल रहते थे। उनके बेड़े में अधिकांशतः मालाबार तट की समुद्री कबीलाई जाति कोली के सदस्य शामिल थे। उसने 200 जहाजों के दो समूह बना रखे थे। परंतु ऐसा प्रतीत होता है कि जहाजों की संख्या बढ़ा चढ़ाकर बताई गयी है। राबर्ट ओरमे के

अनुसार सेनानायक दरिया सारंग और मइ नायक भंडारी के नेतृत्व में शिवाजी के पास कुल 57 बेड़े थे। दौलत खां शिवाजी की नौ सेना का एक अन्य सेनानायक था।

शिवाजी ने अपनी नौ सेना का उपयोग देशी और विदेशी दोनों ताकतों को परेशान करने के लिए किया। परंतु शिवाजी सिद्दियों के आक्रमण को मुश्किल से ही रोक पाये। पेशवाओं ने भी मजबूत नौ सेना की जरूरत महसूस की। पश्चिमी तट की रक्षा करने के लिए उन्होंने मजबूत नौ सेना बना रखी थी। लेकिन मराठों की नौ शक्ति अंगीरों के अधीन अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच गयी। अंगीरों ने पेशवाओं से स्वतंत्र रहकर कार्य किया।

10.8.5 न्याय प्रणाली

मराठा कोई व्यवस्थित न्यायिक विभाग का विकास करने में असफल रहे। ग्राम स्तर पर नागरिक मामलों की सुनवाई **पाटिल** के कार्यालय में अथवा गांव के मंदिर में गांव के बड़े-बूढ़े **(पंचायत)** किया करते थे। अपराध से संबंधित मामलों की सुनवाई **पाटिल** किया करता था। नागरिक और अपराध के मामलों का सर्वोच्च न्यायालय **हाजिर मजलिस** था। **सभानायक** (अध्यक्ष न्यायाधीश) और **महाप्रशनिक** (मुख्य पूछताछ अधिकारी) का कार्य अपराधी को जांचने और उसे परखने का था। पेशवाओं के अधीन ये पद समाप्त हो गये।

बोध प्रश्न

1) **अष्टप्रधान** क्या है?

....

....

....

....

....

2) शिवाजी के प्रशासन के स्वरूप का विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

....

....

3) पेशवाओं के अधीन होने वाले प्रशासनिक परिवर्तनों पर विचार कीजिए।

....

....

....

....

....

10.9 सारांश

मराठा आंदोलन न तो 'हिन्दू प्रतिक्रिया' था न ही यह स्वतंत्रता युद्ध था, इसकी जड़े इस काल के सामाजिक-आर्थिक ढाँचे में निहित है। भूमि पर नियंत्रण बड़े भूमिपतियों के शोषण के खिलाफ प्रतिक्रिया और समाज में उच्च स्तर प्राप्त करने की आकांक्षा आदि कारणों से इस आंदोलन का जन्म हुआ। भक्ति संतों ने इसे एक बौद्धिक पृष्ठभूमि प्रदान की। हालांकि 17वीं शताब्दी से ही मराठा अहमदनगर और बीजापुर शासकों के अधीन कार्यरत थे, परंतु अहमदनगर के शासन के पतन और मुगलों के लगातार दबाव ने उन्हें शक्ति अर्जित करने का मौका दिया। दक्खनी राज्यों के पतन से

क्षेत्रीय अखंडता भी समाप्त हो गयी। मुगल उन्हें **भूमिया** से ज्यादा कुछ नहीं समझते थे। मुगल इसी भ्रम में पड़े रहे और मराठा आंदोलन के सही स्वरूप को पहचान नहीं पाये। उन्हें लुटेरे समझकर मुगलों ने भारी भूल की। उनका एक लोकप्रिय आधार था जिसे मुगल समझ नहीं पाये। अपनी इस सोच के कारण औरंगजेब ने जय सिंह की बात नहीं मानी और मराठों से संधि नहीं की। मुगल सम्राट हमेशा मराठा और दक्खन समस्या को अलग-अलग करके देखते थे परंतु दोनों एक-दूसरे से जुड़ी हुई थी। औरंगजेब ने सही स्थिति पहचानने में बहुत देर की। आतंक फैलाने के लिए शम्भाजी की हत्या एक और भूल थी। दक्खन में मुगलों द्वारा मुगल प्रशासन के थोपे जाने के फलस्वरूप एक नये संघर्ष का जन्म हुआ—अधिकार छिनने के बाद स्थानीय भूमिपति प्रतिशोध की भावना से धधक रहे थे और संघर्ष कर रहे थे। यहां तक कि मुगल **जागीरदारों** के लिए कुछ भी वसूल करना असंभव सा हो गया था। इसके कारण चारों ओर अव्यवस्था और अराजकता फैल गयी और औरंगजेब इस स्थिति को संभाल न सका। आप आगे पढ़ेंगे (देखिए खंड 9, इकाई 35) कि मुगलों के पतन में दक्खन समस्या ने विशेष भूमिका निभाई।

शिवाजी की प्रशासनिक व्यवस्था में कोई नयी बात नहीं थी, परंतु उसने इसे ज्यादा से ज्यादा केंद्रीकृत कर नये रंग में रंग दिया। उसने इस बात का खास ख्याल रखा कि राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने के लिए कोई भी दल ज्यादा शक्तिशाली न हो जाए। परंतु एक योग्य व्यक्ति ही इस व्यवस्था को सुचारु रूप से चला सकता था। शिवाजी के देहांत के बाद पतन का दौर शुरू हुआ। पेशवाओं के शासनकाल में न केवल केंन्द्रीय और प्रांतीय प्रशासन में बल्कि सेना में भी भ्रष्टाचार और आलस्य का बोलबाला हो गया। खंड 9, इकाई 36 में आप पढ़ेंगे कि किस प्रकार राजा की शक्ति क्रमशः समाप्त होती चली गयी और 18वीं शताब्दी में यह शक्ति पेशवाओं के हाथ में चली गयी।

10.10 शब्दावली

बखर : जीवनी के लिए प्रयुक्त मराठी शब्द

भूमिया : एक भूमिपति वर्ग

बारगीर : ऐसे सैनिक जिन्हें राज्य द्वारा घोड़े और हथियार प्रदान किये जाते थे

चिटनिस : पत्रव्यवहार करने वाला लिपिक

देशमुख : वे उत्तर भारत के **चौधरी** (ग्राम प्रधान) और गुजरात के **देसाई** के समकक्ष थे

देस : पूर्व से पश्चिमी घाट तक फैला हुआ दक्खनी पठार

फड़निस : उप-लेखा परीक्षक

घटमाथा : ऊँचाई पर स्थित पश्चिमी घाट की ऊपरी भूमि

जमादार : कोषाध्यक्ष

कारखानिस : रसद विभाग / कारखाने की देखरेख करने वाला

कोंकण : पश्चिमी तटीय प्रदेश; पश्चिमी घाट का निचला इलाका

कमाविस्दार : पेशवाओं के अधीन वह छोटे प्रांत का **सूबेदार** हुआ करता था

खानज़ाद : कुलीन वर्ग के पुत्र

ममलतदार : पेशवा के अधीन ये बड़े प्रांतों के **सूबेदार** (राज्याध्यक्ष) हुआ करते थे। खानदेश, गुजरात और **कर्नाटक में वे सरसूबेदार** के अधीन थे, परंतु अन्य जगहों पर वे केन्द्रीय सरकार के सीधे **नियंत्रण में थे**

मजूमदार : लेखा परीक्षक और लेखा अधिकारी

पोटनिस : खजांची

किलेदार : किले का अधिकारी

सबनिस : **दफ्तरदार**

सिलहदार : भाड़े के सैनिक। उन्हें अपने घोड़े और हथियार लाने पड़ते थे

वतन : आनुवांशिक भूमि

10.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. देखिए भाग 10.2
2. (i) × (ii) × (iii) √ (iv) √
3. इस बात का जिक्र कीजिए कि किस प्रकार कुछ इतिहासकार मानते हैं कि मराठा आंदोलन एक हिन्दू प्रतिक्रिया थी। इसके बाद तर्क दीजिए कि किस प्रकार यह हिंदू प्रतिक्रिया नहीं थी बल्कि उनके उत्थान के लिए दूसरे कारण भी उत्तरदायी थे। देखिए भाग 10.3

बोध प्रश्न 2

1. देखिए भाग 10.4

   (i) भोंसले (ii) जावली (iii) मोरे (iv) सिंदखेर (v) मावल
3. देखिए उपभाग 10.5.2 बताइए कि किस प्रकार उसने बीजापुर और गोलकुंडा के खिलाफ मुगल-मराठा गठबंधन की योजना बनाई थी। परंतु औरंगजेब ने मन से इस योजना का साथ नहीं दिया और यह योजना असफल हो गयी।

बोध प्रश्न 3

1. देखिए भाग 10.6
2. देखिए भाग 10.7

बोध प्रश्न 4

1. बताइए कि वे कौन थे। उनकी शक्ति और कार्यों का उल्लेख कीजिए। देखिए भाग 10.8.1
2. देखिए भाग 10.8 और इसके उपभाग। इस तथ्य का विश्लेषण कीजिए कि क्या शिवाजी ने नयी प्रशासनिक व्यवस्था कायम की या पुरानी व्यवस्था को ही नये रंग में रंगा और बेहतर निगरानी व्यवस्था की स्थापना की।
3. देखिए भाग 10.8 और इसके उपभाग। बताइए कि पेशवा के अधीन किस प्रकार प्रशासन में अवनीति हुई जिसके कारण अंततः उनका पतन हुआ।